रणबीर शर्मा आईपीएसः खाकी उतरी तो राजनीतिक सत्ता पाने को आतुर

फ़रीदाबाद (म.मो.) स्वतंत्रता दिवस यानी 15 अगस्त को लगभग सभी अखबार राजनेताओं की तस्वीरों वाले विज्ञापनों से भरे होते हैं । इन्हीं में से एक विज्ञापन था पूर्व आईपीएस रणबीर शर्मा का। वे करीब तीन वर्ष तक-1999-2002 तक यहां के पुलिस अधीक्षक रह चुके हैं। दैनिक अमर उजाला के आधे पृष्ठ पर छपे इस विज्ञापन में रणबीर शर्मा मौजूदा राजनेताओं को काले अंग्रेज बता कर, जनता को उनकी गुलामी व लूट से छुटकारा पाने का आह्वान करते हैं। विकल्प के रूप में वे अपनी 'राष्ट्रीय लोक स्वराज पार्टी' को प्रस्तुत करते हैं। इस विज्ञापन में वे सभी मंझे हुये राजनेताओं की भांति आम जनता के सभी मुद्दे उठाते हैं ओर उन्हें हल करने का भरोसा देते हैं। अपनी पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष तो वे खुद हैं ही परन्तु पदाधिकारी कौन हैं, इसका कोई ज़िक्र नहीं है।

बतौर एसपी यहां की जनता ने उन्हें तीन वर्ष तक झेला है। उस वक्त केन्द्र में अटल बिहारी वाजपेयी की सरकार थी जिसमें रणबीर के ससुर आईडी स्वामी गृह राज्य मंत्री थे और हरियाणा में ओम प्रकाश चौटाला की सरकार थी। चौटाला पुत्र अभय इन पर कुछ ज़्यादा ही मेहरबान रहता था। वह अक्सर इनके घर पर ही मंडराता रहता था। इसी बूते पर वे यहां तीन साल तक बेखौफ़ लूट-मार करते रहे कोई रोकने-टोकने वाला नहीं था। उस समय '**मज़दूर मोर्चा**' दैनिक प्रकाशित होता था। शायद ही कोई दिन ऐसा जाता होगा जिस दिन मोर्चा में इनकी कोई न कोई काली करतूत न छपती हो। इनके कुल वेतन व खर्चों के हिसाब के साथ उन द्वारा खरीदी जाने वाली जायदादों का ब्योरा छपने से रणबीर काफ़ी परेशान रहते थे। उच्चाधिकारी बेशक इन्हें धमकाने की स्थिति में नहीं थे लेकिन महकमे की बिगड़ती छवि का हवाला तो देते ही थे। रोज़-रोज़ की बदनामी से मुख्यमंत्री चौटाला का परेशान होना भी स्वाभाविक था।

ऐसे में रणबीर शर्मा ने '**मज़दूर मोर्चा**' सम्पादक सतीश कुमार पर पहला बड़ा वार करते हुये 19 अगस्त 2001 को उन्हें प्रात: करीब 7 बजे घर से उठवा लिया। उठाने वाले सीआईए के पांच पुलिसकर्मी बिना वर्दी के थे। उस वक्त उनके इरादे तो पता नहीं क्या थे लेकिन जब पूरे शहर में हंगामा होने लगा, जनता सड़कों पर उतरने लगी तो रणबीर ने उसी प्रात: 4 बजे में एक फ़र्जी मुकदमा सतीश कुमार के विरुद्ध दर्ज किया और शाम करीब 8 बजे ड्यूटी मैजिस्ट्रेट के सामने पेश करके रिमांड ले लिया। अगले दिन नियमित मैजिस्ट्रेट ने पुलिस रिमांड तो नहीं दिया लेकिन न्यायिक हिरासत में रोहतक भेज दिया था। वहां से करीब 58 दिन बाद सुप्रीम कोर्ट के हस्तक्षेप से हाईकोर्ट ने जमानत के आदेश दिये। फ़र्जी केस करीब 5-6 साल चला और

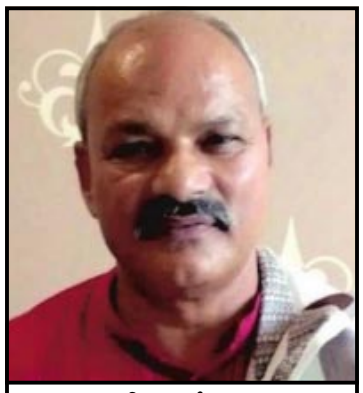

रणवीर शर्मा : सत्ता की भूख बाकी है!

पुलिस कुछ भी साबित न कर सकी और केस खत्म।

58 दिनों की इस जेल यात्रा के दौरान रणबीर ने राजीनामे के लिये बहुत प्रयास किये। लेकिन सम्पादक ने उनसे बात तक करने से इन्कार कर दिया था और जेल से आते ही फ़िर उनकी पोल खोलनी शुरू की तो उन्होंने एक के बाद एक करके 4 और मुकदमे दर्ज करा दिये। एक मुकदमा तो हत्या का व एक हरिजन एक्ट का भी दर्ज कराया। हत्या के मुकदमे में हाईकोर्ट से अग्रिम जमानत मिली तथा ट्रायल कोर्ट ने दूसरी ही पेशी में केस खत्म करके डिस्चार्ज कर दिया। हरिजन एक्ट में 2 सप्ताह की जेल यात्रा सोनीपत की तो की लेकिन कोर्ट के अदेश पर दोबारा तफ़्तीश करने पर केस झूठा पाया गया और इसी ज़िला पुलिस ने मुकदमा खारिज कर दिया व कोर्ट ने मुहर लगा दी। यही हाल बाकी मुकदमों का भी हुआ। इसके बावजूद सम्पादक की कलम बिना रुके व डरे चलती रही। रणबीर शर्मा टुकुर-टुकुरी देखता व सड़ता रहा।

अन्य बहुत सी बातों के अलावा '**मज़दूर मोर्चा**' ने उस वक्त यह भी लिखा था कि दुर्भाग्य है इस देश का कि जिसकी काबलियत एक हवलदार के बराबर भी नहीं है, वह आज हरियाणा के सब से महत्वपूर्ण ज़िले का एसपी बना बैठा है। जिसे न पढना आये न लिखना आये, लूट मार व चौटालों की चापलूसी के अलावा दूसरा कोई काम न आता हो उस नालायक के हवाले यह ज़िला कर रखा है। उनकी यही नालायकियों के चलते पुलिसकर्मियों का एक बड़ा वर्ग सम्पादक सतीश का पूरा सहयोग करता था। इसी बात से वे ज़्यादा परेशान रहते थे।

चौटाला राज के बाद उन्हें कोई ढंग की पोस्टिंग नहीं मिली। बतौर डीआईजी वे आईटीबीपी में भटकते रहे और आईजी बन कर भी इधर-उधर खुड्डा लाइन में समय गुजारते रहे। सन् 2013 में आम आदमी पार्टी की हवा देख कर सत्ता में बड़ी हिस्सेदारी पाने के चक्कर में इन्होंने आईजी के पद से 11 माह पूर्व ही सेवानिवृत ले ली। आम आदमी पार्टी में भी इन्होंने अपने ही जैसे एक नालायक, अंधविश्वासी कांवड़िये जयहिंद को पकड़ तो लिया लेकिन वे भी इन्हें पार्टी के चक्कर काटने से अधिक कुछ दिला नहीं पाये। जहां कुछ मिलता नहीं वहां रणबीर शर्मा टिकता भी नहीं। लिहाजा 2014 के लोकसभा चुनावों के तुरंत बाद अपनी एक तथाकथित राष्ट्रीय पार्टी का आडम्बर खड़ा कर लिया। इस पार्टी को न लोकसभा चुनाव में कुछ मिला और न ही राज्य विधान सभा चुनावों में। हां नौकरी में जो लूट-मार का पैसा जोड़ा था वह जरूर कुछ हद तक ठिकाने लग गया। लेकिन सत्ता पाने की ललक अभी काफ़ी है।

सुधी पाठकों को समझना चाहिये कि जिस व्यक्ति ने एसपी जैसे महत्वपूर्ण पद पर तैनाती के दौरान न जनता का भला किया हो और न ही अपने मातहतों का वह भला राजनेता बन कर क्या भला करेगा? हां नौकरी के दौरान अपना घर भरने में जो कसर बाकी रह गयी थी उसे पूरा करने के अरमान जरूर हैं। भेड़ की खाल में आये भेड़िये से यदि सावधानी नहीं बरती गयी तो परिणाम भयंकर हो सकते हैं।

कहीं भाजपा अपनी चुनावी जमीन तो नहीं खो रही है

जुलाई 2017 में, इससे पहले कि नोटबंदी की घातक मार से जनता उबर पाती, उस पर सरकार ने एक नया हमला बोल दिया। एक बार फ़िर लोग़ों की जेबों को खाली कराने की पटकथा लिखी गयी। यह मामला था-नया वस्तु और सेवा कर (जीएसटी) इसके चलते वस्तु उपभोग में भारी कमी आई है। क्योंकि लोग़ों की जेबों में अभी भी पर्याप्त नकद रुपया नहीं था। उद्योग-धंधे अभी सम्भल भी नहीं पाये थे कि जीएसटी लागू कर दिया गया। हालांकि अर्थव्यवस्था की सेहत ठीक होती तो भी जीएसटी जनता के हित में नहीं था।

सरकार ने अपने पुराने एजेंडे 'हिन्दुत्व' को लगातार आगे बढाया है। यहां वह असफ़ल होती हुई नज़र नहीं आ रही है। इतिहास की किताबों में फ़ेरबदल की गयी। नये सिरे से मिथकों को गढ़ा गया और उसकी विष बेल लोग़ों के दिमाग में आरोपित की गयी। असली समस्याओं से उनका ध्यान हटाकर लव जेहाद, गाय, मुस्लिम विरोध और छद्म राष्ट्रवाद के मुद्दों की ओर मोड़ा गया। 2014 के लोकसभा चुनाव में मोदी विकास का जो शिगूफ़ा लेकर आये थे और जिसने बीजेपी को सत्ता में पहुंचा दिया, अब उस शिगूफ़े की हवा निकल रही है। सरकार की जिस छवि को मीडिया ने पेंट-पॉलिश करके बड़ी मेहनत से चमकाया था, उसकी चमक आर्थिक विफलताओं के चलते उतर रही है।

ऐसे हवाई दावे किये जा रहे हैं कि अगले 10 वर्षों बाद भारत की अर्थव्यवस्था दुनिया की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था होगी। जबकि सच्चाई यह है कि देश की आधे से अधिक आबादी बेहद गरीबी और भुखमरी में जीने को मजबूर है। अक्टूबर 2017 में जारी वैश्विक भूख सूचकांक में भारत की रैंक गिरते-गिरते 100 वें स्थान पर पहुंच गयी। पड़ोसी देश बांग्लादेश भी इस रैंक में हम से बेहतर है और हमारी सरकार आधी से अधिक आबादी की रोटी भी मुहैया नहीं करा पा रही है।

हालात इतने बिगड़ गये कि मोदी का सबसे मजबूत गढ़ माने जाने वाले गुजरात में भी जनता सरकार से काफ़ी नाराज हो गयी, जिसका असर विधानसभा चुनाव में भी देखने को मिला। दिसम्बर 2017 के गुजरात चुनाव में मोदी की अपने ही घर में कठिन परीक्षा हुई। 20 सालों से गढ़ रहे गुजरात में इस बार उन्हें काफ़ी जोर आजमाइश करनी पड़ी। भाजपा ने यहां बहुमत तो बनाये रखा लेकिन 16 सीटें हार गयी। इससे यह तो स्पष्ट है कि अभी तक शीर्ष पर रही भाजपा का यह रुतबा छिनने की शुरुआत हो गयी है।

गुजरात में ही पिछले कई सालों से व्यापारी वर्ग मोदी की नीतियों का समर्थन करता आया था। लेकिन अबकी बार सूरत बदल गयी। लोगों का भरोसा सरकार में कमजोर हुआ है। नोटबंदी के बाद सूरत के कपड़ा उद्योग के मालिक मज़दूरों का भुगतान नहीं कर पाये। कारोबार करने वाले लोग़ों के पास पर्याप्त नकदी नहीं बची, जिससे मज़दूरी का भुगतान करने में कठिनाई पैदा हुई। इसके चलते कपड़ा कारोबार छोड़कर बहुत से मज़दूर चले गये। इसी तरह देश के सैंकड़ों अन्य कारखानों में नकदी की कमी के चलते चन्द महीनों में लाखों की संख्या में मज़दूर बेरोजगार हो गये। कई कम्पनियां उजड़ गयीं।

मोदी से नाराज गुजराती कारोबारियो का असर भी गुजरात चुनाव में देखने को मिला। प्रधानमंत्री मोदी की नीतियों ने मुख्य रूप से छोटे और मध्यम वर्ग के व्यापारियों को असन्तुष्ट किया है। जिस व्यापारी वर्ग ने मोदी को 2014 चुनाव में हाथो-हाथ लिया था। अब यही व्यापारी वर्ग मोदी की नीतियों के खिलाफ़ धरना प्रदर्शन करता नज़र आ रहा है।

मोदी गुजरात मॉडल के दम पर ही केन्द्र में सरकार बनाने में कामयाब हो सके थे। देश में गुजरात मॉडल को बढा-चढा कर बताया गया था। लोगों के मस्तिष्क में विकसित राष्ट्र की छवि बिठायी गयी थी। जिसके नायक मोदी थे। मोदी की हालिया नीतियों ने गुजरात के कई छोटे-बड़े व्यापार को नुकसान पहुंचाया। आर्थिक नुकसान के बावजूद अधिकांस लोग़ों ने मोदी की पार्टी को ही चुना है। इसका कारण आर्थिक नहीं है। इसका कारण है मोदी का पहला आधार 'हिन्दुत्व'।

अर्थिक नीतियों की विफ़लता के चलते मोदी के पार्टी के कई पक्के वोट कांग्रेस की झोली में खिसक गये। इसका साफ़ मतलब है कि हिन्दुत्व के नाम पर मोदी लोग़ों से ज्यादा दिन तक वोट बटोरने में कामयाब नहीं हो पायेंगे। चार सालों में ठोस जमीनी काम को अंजाम न दे पाने के चलते और देश का माहौल न सम्भाल पाने की वजह से मोदी की नकारात्मक छवि बनने लगी है। इसकी चर्चा लोगों से किसी भी गली-नुक्कड़ पर आमतौर पर सुनने को मिल जाती है। उत्साही मतदाता अब मोदी के कार्यों से असंतुष्ट हैं। राजस्थान उप चुनाव में भी मोदी की पार्टी का जादू नहीं चल पाया। राजस्थान उपचुनाव में बीजेपी अपने ही गढ़ में तीनों सीटों पर बुरी तरह हार गयी। यही हाल यूपी उप चुनाव में भी था, जहां मुख्यमंत्री और उप-मुख्यमंत्री द्वारा खाली संसदीय सीट पर भाजपा को बुरी तरह हार का सामना करना पड़ा। बीजेपी का दूसरा एजेण्डा 'हिन्दुत्व' की कड़ियां भी कमजोर पड़ने लगी हैं। अब ये बातें इशारा कर रही हैं कि जनता का ज़्यादा दिनों तक धर्म के नाम पर ध्रुवीकरण नहीं किया जा सकता। लोग़ों के पास फ़ांकने को अनाज नहीं है तो आखिर लोग कब तक 'हिन्दुत्व' का टुकड़ा फ़ांक-फ़ांक कर पेट भर सकते हैं?

- मजदूर मोर्चा विश्लेषण

मोदी के राष्ट्रीय औद्योगिक क्षेत्र में कैंसर की महामारी

विशेष रिपोर्ट

हरियाणा स्वास्थ्य सर्वेक्षण 2015 के अनुसार पूरे राज्य में ही कैंसर तेजी से फ़ैल रहा है। भारत में कैंसर के कारण मरने वाले लोग़ों में 39 फ़ीसदी हरियाणा से है। पिछले कई साल की तुलना मे 2017 में कैंसर बहुत ज़्यादा लोग़ों की मौत का कारण रहा है। इस रिपोर्ट के अनुसार सब से ज्यादा कैंसर ग्रसित ज़िला है फ़रीदाबाद राष्ट्रीय औद्योगिक क्षेत्र, खासकर फ़रीदाबाद नहर पार इलाके में कैंसर तेजी से फ़ैल रहा है। उस रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि इलेक्ट्रोप्लेटिंग कारखानों और अन्य कारखानों का कचरा भी कैंसर फ़ैलाने का एक मुख्य कारण है। राष्ट्रीय ग्रीन ट्रिब्यूनल ने कुछ कम्पनियों को कचरा शोधन करने का नोटिस भी दिया है, लेकिन कम्पनियों का कहना है कि अब तक उनके पास नोटिस नहीं आया।

आजकल स्वास्थ्य और पर्यावरण मंत्रालय सिनेमा या टीवी के माध्यम से तम्बाकू सेवन के चलते होने वाले कैंसर से बचने के लिये अपील कर रहा है। बड़े भावुक तरीके से हमें इस बात पर सहमत कराया जाता है कि कैंसर के लिये मरीज खुद ही जिम्मेदार है। लेकिन यह 'खूबसूरत' जागरुकता अभियान जिस चीज़ को छुपाता है वह और भी भयावह है। कुछ तथ्य शायद हमें यह बात समझने में मदद करेंगे। पिछले साल सर्दी में भारी धुएं में हानिकारक धातुकण की मात्रा विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा तय किये गये मानक से 30 गुणा ज्यादा थी जो किसी इन्सान के फ़ेफड़े में 50 सिगरेट के धुयें का असर डालने के लिये काफ़ी है। कोलकाता के चित्तरंजन कैंसर शोध संस्थान के एक शोध का नतीज़ा है कि दिल्ली में 22 लाख स्कूली बच्चों के फ़ेफड़े की हालत इतनी बिगड़ गयी है कि उम्र भर सुधर न सके। शोध जर्नल दी लैंसेट ने अपने शोध में पाया है कि सन 2015 में सिर्फ़ वायु प्रदूषण के चलते भारत में 25 लाख लोग़ों को जान गवांनी पड़ी। यह संख्या 2012 में 6 लाख थी। उनमें से बहुत से ऐसे लोग थे जो धुम्रपान या तम्बाकू सेवन नहीं करते थे। लेकिन उनको फ़ेफड़े का कैंसर था। भारतीय आयुर्विज्ञान शोध संस्थान के 2010 के एक शोधपत्र के मुताबिक उस साल तम्बाकू सम्बन्धित कैंसर पीड़ितों की संख्या 2,63,523 थी, दूसरे कारणों से कैंसर पीड़ित लोग़ों की संख्या 5,64,326 थी। इस पत्र का कहना था कि सन 2015 और 2020 में तम्बाकू के कारण कैंसर ग्रसित लोग़ों की संख्या क्रमश: 2,88,921और 3,16,734 होगी, जबकि दूसरे कारणों से कैंसर के चपेट में आने वाले लोग़ों की संख्या क्रमश: 6,29,933 और 7,02,685 होगी।

इन तथ्यों से साफ़ पता चलता है कि तम्बाकू सेवन कैंसर का एक कारण है, लेकिन एक मात्र कारण नहीं। लेकिन हमारे स्वास्थ्य के बारे में चिन्तित रहनुमा सिर्फ़ तम्बाकू का सेवन करने वालों को दोषी ठहराकर अपनी जिम्मेदारी से हाथ धोना चाहते हैं। तम्बाकू उत्पादन पूरी तरह बंद करनें में भी उनकी कोई कोशिश नजर नहीं आती। उल्टा अक्सर यह तर्क देते हैं कि तम्बाकू उत्पादन क्षेत्र बहुतों को रोजगार देता है और उससे सरकार को टैक्स भी मिलता है। इसलिये इन क्षेत्रों को बंद करना फ़ायदेमंद नहीं है। पर किसके लिये फ़यदेमंद नहीं है? जो वहां काम करते हैं? जो कैंसर का शिकार हो रहे हैं? या जो इन क्षेत्रों से अरबों-खरबों का मुनाफ़ा कमा रहे हैं? क्या पर्यावरण और स्वास्थ्यमंत्रालय वाकई हमारी जिंदगी के बारे में चिंतित हैं?

इतनी भारी संख्या में फ़ेफड़े की बीमारी तथा कैंसर फैलने के लिये जिम्मेदार कौन है? कम्पनियों को सरकार धड़ल्ले से पानी, हवा, मिट्टी प्रदूषित करने की अनुमति दे रही है। इस गंदगी के चलते अगली पीढी के फेफड़ों को पहले से ही कैंसर सम्भावित अंग बना दिया गया है। कैंसर से बचने के लिये क्या किसी भी तरह का उपाय उनके लिये काफ़ी होगा?

विकास के नाम पर जंगल, नदी, पहाड़ और हवा में जहर फैलाया जा रहा है। हरियाणा के फ़रीदाबाद ज़िले को भी विकास के लिये राष्ट्रीय औद्योगिक क्षेत्र बनाया गया था। आस-पास के रहने वालों के लिये उसने तोहफ़े में कम दिहाड़ी मज़दूरी और जानलेवा कैंसर दिया है। इसका फ़ायदा उठाकर निजी अस्पतालों ने भी वहां 'सुपर-स्पेशियलिटी' अस्पताल खोल लिया है। कमरतोड़ मेहनत के बाद कुछ पैसा मुश्किल से मिल भी जाये ता वह अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिये नहीं, बल्कि इन लुटेरे अस्पतालों का बिल चुकाने में खर्च होता हैं। क्या इन गंदगी और प्रदूषण फ़ैलाने वाले कारखानों की मौजूदगी और सरकार की उपेक्षापूर्ण रवैये के होते कैंसर से बचना मुमकिन है?

-अमित इकबाल